All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

WEEKLY KHETI SANDESH

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 10-08-2026 • Vol.2 No.32 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

भारत में अरंडी की फसल को उसकी बुवाई से लेकर कटाई तक के समय में लगभग 63 से भी अधिक प्रजाति के नाशीकीटों द्वारा नुकसान पहुंचाया जाता है। अरंडी की फसल में प्रमुखतः सेमीलूपर, पत्ती खाने वाली सुंडी, कैप्सूल बेधक सुंडी, फुदका (जैसिड), थ्रिप्स, सफेद मक्खी, माईट, पर्ण सुरंघक, तने को काटने वाली सुंडी, हरी सुंडी, कातरा, दीमक, सफेद लट आदि द्वारा ग्रसित किया जाता है। अरंडी की फसल में विविध नाशीकीटों द्वारा 39 से 43 प्रतिशत तक नुकसान होता है।

अरंडी का सेमीलूपर कीट तथा समन्वित प्रबंधन

डॉ. अभिषेक शुक्ला, कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी–396450 (गुजरात)

हमारे देश में अखाद्य तेलों में अरंडी का प्रथम स्थान है तथा इसकी गिनती देश की सर्वप्रमुख नकदी फसलों में की जाती है, अरंडी का उपयोग दवा से लेकर विविध उद्योगों में बहुतायत से किया जाता है। अरंडी के तेल में चिकनेपन के कारण इसका प्रयोग इंजिन ऑयल, रंग रसायन बनाने तथा विविध औद्योगिक उत्पादों जैसे कि प्लास्टिक, साबुन, प्रिंटिंग की स्याही, रबर, कोस्मेटिक तथा दवाओं में बहुतायत से किया जाता है। विश्व में अरंडी की खेती प्रमुखतः भारत,

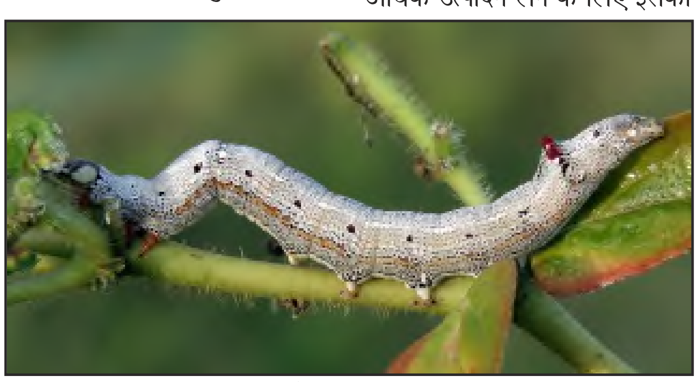

चीन, ब्राज़ील, रूस, थाईलैंड, अफ्रीकी देशों में बड़े पैमाने पर की जाती है। जैसा कि हम जानते हैं कि भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा अरंडी उत्पादन में गुजरात राज्य का प्रथम स्थान है। हमारे देश में अरंडी की खेती गुजरात, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, तामिलनाडु और कर्नाटक राज्यों में की जाती है। एक सर्वे के अनुसार देश का 80 प्रतिशत अरंडी का उत्पादन गुजरात राज्य में ही होता है।

भारत में अरंडी की फसल को उसकी बुवाई से लेकर कटाई तक के समय में लगभग 63 से भी अधिक प्रजाति के नाशीकीटों द्वारा नुकसान पहुंचाया जाता है। अरंडी की फसल में प्रमुखतः सेमीलूपर, पत्ती खाने वाली सुंडी, कैप्सूल बेधक सुंडी, फुदका (जैसिड), थ्रिप्स, सफेद मक्खी, माईट, पर्ण सुरंघक, तने को काटने वाली सुंडी, हरी सुंडी, कातरा, दीमक, सफेद लट आदि द्वारा ग्रसित किया जाता है। अरंडी की फसल में विविध नाशीकीटों द्वारा 39 से 43 प्रतिशत तक नुकसान होता है।

इन सभी उल्लेखित नाशीकीटों में सेमीलूपर एक गंभीर समस्या है। इस कीट का वैज्ञानिक नाम *एकिया जेनेटा* है। ये कीट समूह के लेपिडोप्टेरा गण की नोक्टीडी कुल से सम्बद्ध रखता है। ये कीट अरंडी की फसल की शुरूआती अवस्था में देखा जाता है। अतः अधिक उत्पादन लेने के लिए इसकी सही जानकारी तथा सही समय पर इसका प्रबंधन बहुत ही आवश्यक है।

पहचान :

सुंडी : इस कीट की सुंडी का सिर लाल रंग का होता है, जबकि इसके शरीर पर भूरे, काले या सफेद रंग की पट्टियां देखी जाती हैं।

पतंगा : इस कीट का पतंगा मज़बूत शरीर वाला, राख के रंग का होता है। इसके आगे वाले पंख बादामी रंग के तथा पिछले पंख गहरे रंग के होते हैं। इन्हीं के बीच-बीच में सफेद रंग के

धब्बे भी होते हैं।

जीवन-चक्र : इस कीट की मादा पतंगा पत्तियों के ऊपर तथा पौधों के विविध भागों पर अपने अंडे देती है। एक मादा अपने जीवन काल में लगभग 400 से 450 तक अंडे देती है। अंडा अवस्था का समय 2 से 5 दिनों का होता है। इसके बाद इन अण्डों से निकलने वाली सुंडी का जीवन काल 15 से 20 दिनों का होता है। इस कीट के प्यूपा ज़मीन पर पड़ी सूखी पत्तियों या ज़मीन के अंदर व्यतीत होता है। ये प्यूपा काल 10 से 15 दिनों में पूर्ण होता है। सामान्यतः इस कीट की एक वर्ष के दौरान 5 से 6 पीढ़ियां पूर्ण होती हैं।

पोषी पौधे : अरंडी, नींबू, गोभी, चीकू, अनार, आम, गुलाब, बेर आदि।

नुकसान :

* अण्डों से निकली सुंडियां चर्बी युक्त आहार को खाती है, ये हरित लवक को खाती है, जिससे ये पत्तियां सफेद रंग की हो जाती हैं, धीरे-धीरे ये भूरी होकर सूख कर असमय ही गिर जाती हैं।

* छोटी-छोटी सुंडियां पत्तियों को काट कर खाती हैं, परन्तु बड़े आकार की सुंडियां पत्तियों की शिराओं के अलावा सभी भागों को खा जाती हैं।

* बहुत अधिक प्रकोप की दशा में पुष्प गुच्छ तथा कैप्सूल को भी काट-काट कर खाने लगती है। गर्मी के मौसम में ये सुंडियां बेर या गुलाब की पत्तियों को खाकर जीवित रहती हैं।

* सुंडियां पत्तियों को खाती है तथा कभी-कभी तो सम्पूर्ण फलों को ही खाकर उनका विनाश कर देती है।

* इस कीट का प्रकोप प्रमुख्यतः अगस्त-सितम्बर महीनों में देखा जाता है।

समन्वित नाशीकीट प्रबंधन :

* अरंडी की फसल की बुवाई अगस्त के प्रथम पखवाड़े के बाद करने से सेमीलूपर का

प्रकोप कम होता है।

* अरंडी की फसल के साथ मूंग, मोठ, तिल, चवला, ग्वार, उड़द तथा मूंगफली जैसी फसलों को अंतर फसल के रूप में उगाने से इस कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

* अरंडी की फसल की कटाई के बाद खेतों की गहरी जुताई करने से ज़मीन में रहने वाले इस कीट की प्यूपा अवस्था भूमि के ऊपर आ जाती है। ये बाद में सूर्य की रोशनी तथा परभक्षी पक्षियों द्वारा नष्ट कर दिए जाते हैं।

* अरंडी की फसल की शुरूआती अवस्था में बड़े आकार की सुंडियों को एकत्रित करके उनका नाश कर देना चाहिए।

* अरंडी के सेमीलूपर के वयस्क पतंगे प्रकाश की तरफ बहुधा आकर्षित होते हैं, प्रथम वर्ष के बाद खेतों में प्रकाश पाश (लाईट ट्रेप) लगाने से वयस्क पतंगों को बड़ी संख्या में एकत्रित करके उनका नाश किया जा सकता है। इससे इस कीट की संख्या में कमी आती है तथा नुकसान भी कम होता है।

* अरंडी की सेमीलूपर सुंडी पर 27 प्रकार के परजीवी पाए जाते हैं, इनमें ट्राईकोग्रामा तथा टिलोनोमस नाम की बर्र इसके प्रमुख परजीवी हैं, इनके द्वारा 44 से 100 प्रतिशत जितना परजीवीकरण रिकॉर्ड किया गया है। खेत में इस कीट के पतंगों की उपस्थिति दिखने पर ट्राईकोग्रामा नाम की बर्र को एक लाख के हिसाब से प्रति सप्ताह की दर से खेतों में छोड़ना चाहिए। इससे काफी बढ़िया परिणाम भी मिलते हैं।

* जब अरंडी की फसल में सेमीलूपर कीट का प्रकोप अधिक होता है, तब खेतों में प्राकृतिक तौर पर कई प्रकार के पक्षी इसका भ्रमण करते हैं। इनमें सामान्य कीटभक्षी पक्षी जैसे मैना, ब्लैक ड्रेंगो, बबुला आदि है। इन कीटभक्षी पक्षियों को आकर्षित करने हेतु खेतों में इनके बैठने की व्यवस्था भी करनी चाहिए।

* नीम की निम्बोली का पाऊडर 500 ग्राम (5 प्रतिशत अर्क) 10 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव करने से इस कीट की छोटी सुंडियों से सुरक्षा मिलती है।

* कीट रोग कारक जीवाणु *बेसिलस थयूरिनजिनेसिस* 15 ग्राम पाऊडर को 10 लीटर पानी में मिला कर दूसरी या तीसरी अवस्था की सुंडियों पर छिड़काव करने से सार्थक परिणाम मिलते हैं।

* कीट का अधिक प्रकोप होने की दशा में फसल पर एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 4.0 ग्राम 10 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

इस प्रकार से अरंडी की फसल में सेमीलूपर कीट का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है।

ललिता, सुमित सैनी, प्रवेश कुमार, राकेश कुमार, चरण सिंह, सुखम मदान व आशीष जैन, सहायक वैज्ञानिक और **विशाल गांधी व अमित कुमार**, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, धान अनुसंधान संस्थान, कौल (कैथल)
मीनू, कृषि विज्ञान केंद्र, भिवानी

वर्षा के अभाव का धान की पत्ती लपेट (Leaf Folder) कीट के प्रकोप पर प्रभाव

वर्ष 2026 में हरियाणा के सिंचित धान क्षेत्रों में यह देखा गया है कि जुलाई माह में वर्षा कम होने या वर्षा न होने की स्थिति में धान में पत्ती लपेट

कीट का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक होता है। वर्ष 2023 में भी इसी प्रकार की स्थिति देखने को मिली थी। जुलाई माह में वर्षा सामान्य से कम होने के बावजूद सिंचित धान की फसल में पत्ती लपेटक (Leaf Folder) का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक दर्ज किया गया। इसका कारण केवल आर्द्रता नहीं, बल्कि वर्षा, तापमान, धूप, सिंचाई तथा प्राकृतिक शत्रुओं के संयुक्त प्रभाव है। हरियाणा में अधिकांश धान की खेती सिंचाई पर

आधारित होने के कारण वर्षा की कमी के बावजूद खेतों में पर्याप्त नमी बनी रहती है। इसलिए फसल पर सूखे का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता, जबकि वर्षा के अभाव से कीट के विकास में आने वाली प्राकृतिक बाधाएं समाप्त हो जाती हैं। वर्षा के अभाव, शुष्क एवं अपेक्षाकृत गर्म मौसम में वयस्क पतंगों की उड़ान, समागम तथा अंडे देने की गतिविधियां सुचारु रूप से अधिक होती हैं। परिणामस्वरूप कीट का प्रकोप बढ़ जाता है। जुलाई में शुष्क मौसम के दौरान पर्याप्त धूप मिलने से पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता बढ़ती है और सिंचित खेतों में धान की फसल तेजी से बढ़ती है। ऐसी अवस्था में कोमल एवं हरी पत्तियां अधिक उपलब्ध रहती है, जो पत्ती लपेटक की सुंडियों के लिए आदर्श भोजन का कार्य करती हैं। फलस्वरूप मादा पतंगें इन पौधों पर अधिक संख्या में अंडे देती हैं और कीट

शेष पृष्ठ 8 पर

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 32
तिथि : 10-08-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

पपीता की व्यवसायिक खेती

पपीता शीघ्र पकने वाला उपयोगी फल है। रोपण के एक वर्ष में फसल देने तथा प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक उत्पादन एवं पौष्टिक गुणों के कारण इसकी व्यवसायिक खेती तथा गृह वाटिका में व्यापक सम्भावनाएं हैं। इसके पके फलों को ताज़े सेवन के अतिरिक्त जैम, सब्ज़ी, पेठा तथा कच्चे फलों से पपेन बनाते हैं।

जलवायु : उष्ण जलवायु का पौधा है, जो पाला रहित, खुले धूप वाले क्षेत्रों में जल की समुचित व्यवस्था होने पर उगाया जा सकता है। इसके लिए गर्मियों में तापक्रम 110 डिग्री एफ. के ऊपर तथा सर्दियों में 40 डिग्री एफ. के नीचे जाना

चाहिए।

भूमि : पपीते की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली जीवांश युक्त दोमट मृदा उत्तम होती है।

जातियां : पूसा ड्वार्फ, पूसा जाइंट, पूसा डेलीशस, पूसा मेजस्टी, पूसा नन्हा, हनीड्यू, कुर्ग हनीड्यू एवं अर्का सूर्य।

बीज दर : 250–300 ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर की रोपाई के लिए पर्याप्त होता है।

नर्सरी तैयार करना : पपीता को स्थाई स्थान पर रोपण से 1–1 प्रतिशत माह पूर्व बीज को नर्सरी में बोया जाता है। गोबर की खाद मिला कर नर्सरी को अच्छी तरह से तैयार करके 3×1 मीटर आकार की क्यारियां ज़मीन से 15 सैंटीमीटर उठी हुई तैयार की जाती है। पौधों को डम्पिंग ऑफ आदि रोगों से बचाने के लिए भूमि व बीज का उपचार कर लेना चाहिए। बीज को 2.5 सैंटीमीटर गहरा रखें। बुवाई के बाद तेज़ धूप एवं वर्षा से बचाव के लिए घास आदि से ढक देना चाहिए। आवश्यकता अनुसार प्रति दिन सिंचाई की व्यवस्था करें।

रोपण का समय : * जुलाई-अगस्त पाला पड़ने की संभावना में।

* सितम्बर-अक्तूबर अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जहां जल निकास का अभाव हो।

* फरवरी-मार्च देश के दक्षिणी भाग समुंद्र तटीय क्षेत्रों में।

पौध रोपण : पपीता का रोपण 2×2 की दूरी, 50×50×50 सैंटीमीटर आकार के गड्ढे खोद कर दो टोकरी गोबर की खाद, 1 किलो बोनमील तथा 1 किलो नीम की खली को मिट्टी में मिला कर गड्ढों को 5 सैंटीमीटर की ऊंचाई तक भर देना चाहिए, ताकि सिंचाई के बाद गड्ढे समतल हो जाएं। इसके बाद नर्सरी में 15–25 सैंटीमीटर आकार की तैयार पौध को एक गड्ढे में दो पौधों की दर से रोपित करें। रोपण शाम को करना चाहिए, रोपण के बाद हल्की सिंचाई आवश्यक है। नर पौधे 10 प्रतिशत ही रखें, शेष पौधों को निकाल देना चाहिए।

सिंचाई : सर्दियों में 10–15 दिन तथा गर्मी में 7–8 दिन के अंतराल से हल्की सिंचाई करें। पानी तने के सम्पर्क में नहीं आना चाहिए।

निराई-गुड़ाई : आवश्यकता अनुसार निराई करके खरपतवारों को नियंत्रित रखें। पौधों के चारों ओर 20–30 सैंटीमीटर ऊंची मिट्टी चढ़ाएं।

तुड़ाई : पौधे लगाने के बाद 10–14 माह के बाद पके फल प्राप्त होने लगते हैं। उत्तर भारत के मैदानी भागों में बसंत ऋतु से गर्मियों तक पके फल प्राप्त होते हैं।

उपज : उचित देखभाल करने पर 30–50 किलोग्राम फल प्रति पौधा प्राप्त किए जा सकते है। दूसरे व तीसरे वर्ष अधिक उपज मिलती है। कुल उपज 100–125 टन तक प्राप्त हो सकती है।

कीट एवं बीमारियां :

*** रेड स्पाइडर :** यह कीट पके हुए फल एवं पत्तियों पर पाया जाता है। इसके प्रकोप से फल खुरदरे एवं काले हो जाते है तथा पत्तियां पीली पड़ जाती है। नियंत्रण के लिए 0.1 प्रतिशत कीटनाशक दवा का स्प्रे करें।

*** एन्थ्रैक्नोज़ :** इसका प्रयोग पत्ती तथा फलों पर होता है, जिससे रोग ग्रसित भाग अंदर को धुंस जाता है तथा पकाने से पहले

ही फल गिर जाते हैं। ये बीमारी तेज़ धूप के कारण होती है। अत: दो कतारों का अन्तर कम करके प्रकोप कम किया जा सकता है। नियंत्रण के लिए ब्लाइटॉक्स 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

*** कोलर रॉट :** यह फफूंदी से लगने वाली बीमारी है। इसमें पौध का ज़मीन से छूता हुआ भाग सड़ जाता है। जलमग्न दशा में यह कवक तेज़ी से फैलता है। बचाव के लिए जल निकास का उचित प्रबंध तथा बीज एवं भूमि का उपचार करें तथा ताम्रयुक्त कवकनाशी घोल 0.3 प्रतिशत से तने के चारों ओर भूमि की सिंचाई करें।

*** पपीता का मौज़ेक :** यह विषाणु जनित रोग है। रोगी पत्तियां चित्तकबरी तथा आकार में छोटी रह जाती हैं एवं पीली पड़ कर झुक जाती है। नियंत्रण के लिए नर्सरी अवस्था से ही 0.1 प्रतिशत रोगोर का 15 दिन के अंतराल से स्प्रे करें।

*** डम्पिंग ऑफ :** यह नर्सरी की बीमारी है। पौधे छोटी अवस्था में ही सड़ जाते हैं। इसके बचाव के लिए नर्सरी की मिट्टी को फार्मलीन के घोल एवं बाविस्टिन से उपचारित करें।

पर्ण कुंचन : यह विषाणु रोग है, पौधों का विकास रुक जाता है तथा पत्तियां मुड़ जाती हैं। उसके बाद पत्तियां छोटी व मोटी हो जाती हैं। देखने में फफोलों जैसी लगती है। विषाणुवहक सफेद मक्खी एवं माहू के नियंत्रण के लिए 0.1 प्रतिशत मैलाथियान का 15 दिन के अंतर से स्प्रे करें तथा ग्रसित पौधों को निकाल दें।

ग्रीष्मकालीन मूंग : मुख्य कीट एवं रोकथाम

मूंग हमारे देश की सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है, जिसकी काश्त खरीफ मौसम के अलावा ग्रीष्म ऋतु में सिंचित क्षेत्रों में की जाती है। इसकी पैदावार उपजाऊ क्षमता से बहुत कम होने के पीछे विभिन्न कारक जिम्मेदार हैं। उनमें से प्रमुख कारण फसल में कीटों का प्रकोप है। इसके अलावा अन्य फसल ना होने की वजह से दूसरी फसलों के कीट भी कई बार नुकसान पहुंचाते हैं। हानिकारक कीटों की रोकथाम करके ग्रीष्मकालीन ऋतु में भी मूंग की अधिक पैदावार ली जा सकती है।

हरा तेला : इस कीट के शिशु व प्रौढ़ छोटे-छोटे पीलापन लिए हरे रंग के होते हैं। ये बड़े चंचल व फुर्तीले होते हैं। थोड़ा छोड़ने पर बच्चे तिरछे चलते हैं तथा प्रौढ़ उड़ जाते हैं। यह कीट पत्तियों की निचली सतह से रस चुराते है व मुंह से जहरीला पदार्थ छोड़ कर भी नुकसान पहुंचाते हैं। परिणाम स्वरूप पत्तों के किनारे नीचे की ओर मुड़ जाते हैं। अत्याधिक प्रकोप होने पर पत्ते पीले व जंगनुमा लाल हो जाते हैं व सूख कर गिर जाते हैं।

चुरड़ा/थ्रिप्स : इस कीट के प्रौढ़ व बच्चे छोटे लगभग 1 मिलीलीटर लम्बे, चमकीले शरीर

वाले, गहरे भूरे रंग के होते हैं। थ्रिप्स फूल में पाए जाते हैं, फूल को कुरेद कर निकलने वाले रस को पीते हैं, जिससे फूल खिलने से पहले ही गिर जाते हैं। यदि ऐसा कोई फूल खिल भी जाता है, तो फूली कुरूप व दाने सिकुड़े हुए व छोटे बनते हैं। बढ़वार रुकने से पौधा झाड़ीनुमा व गहरे रंग का नज़र आता है।

सफेद मक्खी : इस कीट के प्रौढ़ मच्छर के आकार के तथा सफेद पंख वाले होते हैं। यह तीन प्रकार से पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं। पहले इसके शिशु व प्रौढ़ पत्तों का रस चूस कर फसलों को कमज़ोर कर देते हैं, जिससे बढ़वार रुक जाती है। दूसरा इसके द्वारा छोड़े गए चिपचिपे पदार्थ से पत्तों की ऊपरी सतह पर काली फफूंद लग जाती है, जिससे पौधों की भोजन बनाने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है और परिणाम स्वरूप उत्पादन घट जाता है। तीसरा यह मक्खी एक पौधे से दूसरे पौधे तक विषाणु रोग (पीला मौज़ेक)

फैलाती है। फलस्वरूप पौधे की फलियां बहुत कम टेढ़ी-मेढ़ी और पीले रंग की लगती हैं।

पत्ता छेदक (फली बीटल) : यह कीट अप्रैल से सितम्बर तक मूंग को नुकसान पहुंचाता है। इसका प्रकोप छोटे पौधों पर अधिक होता है। यह पत्तों को काट कर छोटे-छोटे सुराख कर देता है, जिससे पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। अधिक प्रकोप से यह पत्तों को छलनी-छलनी कर देता है। यह कीट सुबह व सायंकाल अधिक सक्रिय रहता है। दोपहर के समय तापमान बढ़ने पर यह भूमि में छिप जाता है।

एकीकृत कीट रोकथाम :

1. संतुलित मात्रा में खाद व पानी दें तथा खरपतवारों को नष्ट कर दें।

2. सुंडियों के प्राकृतिक शत्रु जैसे मैना, कौवा, बगुले आदि को आश्रय देने के लिए खेत में टी आकार की बांस या लकड़ी की डण्डियां (8 से 10) प्रति एकड़ लगाने से कीटों का प्रकोप कम करने में मदद मिलती है।

3. चूरड़ा, सफेद मक्खी व हरा तेला की रोकथाम के लिए 400 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई.सी. या 250 मिलीलीटर डायमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. 250 मिलीलीटर ऑक्सीडेमेटॉन मिथाइल (मैटासिस्टॉक्स) 25 ई.सी. या 250 मिलीलीटर फार्मोथियॉन (एन्थियों) 25 ई.सी. प्रति एकड़ 250 मिलीलीटर पानी मिला कर हस्तचालित यंत्र से 2-3 सप्ताह के अंतराल पर छिड़काव करें।

4. पीला मोज़ैक बीमारी की प्रतिरोधक किस्म मुस्कान व सत्या की बुवाई करें। रोगी पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें तथा सफेद मक्खी के लिए कीटनाशक का छिड़काव करें।

5. फली बीटल व अन्य सुंडियों की रोकथाम के लिए 250 मिलीलीटर मोनोक्रोटोफॉस (मोनोसिल-न्यूवाक्रॉन) 30 एस.एल. या 200 मिलीलीटर डाईक्लोरफॉस (न्यूवान) 76 ई.सी. या 500 मिलीलीटर क्विनलफॉस (एकालक्स) 25 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

6. कटाई उपरान्त खेत की गहरी जुताई करें ताकि कीटों की विभिन्न अवस्थाएं पक्षियों द्वारा व अन्य कारणों से नष्ट हो जाएं।

कलमी पौध विधि से आंवले की खेती में ज्यादा लाभ

आज परंपरागत फसलों के उत्पादन के बजाय नकद फसलों के उत्पादन में ज्यादा फायदा लिया जा सकता है। यही कारण है कि किसानों का रूझान इस तरफ बढ़ता जा रहा है। वे लगातार इस तरह की फसलों की जानकारी में लगे हुए हैं, जिससे परंपरागत फसलों में ज्यादा आमदनी ली जा सके। आंवले की पैदावार इसी तरह का विकल्प है। आंवला भारतीय मूल का महत्वपूर्ण फल है। अपने पोषक तत्वों एवं औषधीय गुणों के कारण विश्व भर में लगातार इसकी मांग बढ़ती जा रही है। यह 21 वीं सदी का प्रमुख फल बनता जा रहा है। महत्वपूर्ण सवाल ये है कि इसकी अधिक पैदावार और लाभ कैसे कमाया जा सकता है।

दरअसल आंवले की खेती पहले बीजू पौधे विधि से होती थी। इसके तहत बीज की बुवाई करते है। जिससे खेत में ही सीधे पौधे बन जाती है। लेकिन अब परंपरागत तरीके से इसकी खेती लगभग बंद हो रही है। वर्तमान में कलमी पौधे बनाकर आंवले की खेती की जाती है। कलमी पौध बनाने के लिए सबसे पहले खेत में आंवले के बीज की बुवाई करते है। जब खेत में पौधे में कलमें निकल आती है। इन कलमों को प्लास्टिक की थैली से बांध कर पौध बना ली जाती है। इस पौधे को सीधे खेत में लगाया जाता है। इसलिए इसे कलमी पौध कहा जाता है।

अधि पैदावार और गुणवत्ता के लिए कलमी पौधे से आंवला उगाना बेहतर होगा। इस विधि से कंचन (एन ए-4), कृष्णा (एन ए-5), फ्रांसिस और नरेंद्र नामक किस्मों के आंवले उगाए जा सकते हैं। कलमी पौध विधि से बीजू पौधे की तुलना में करीब तीन गुणा अधिक पैदावार होती है। कंचन (एन ए-4), कृष्णा (एन ए-5), फ्रांसिस और नरेंद्र आंवला की किस्मों की कलमी पौध विधि से खेती करने पर 15 से 20 टन प्रति हैक्टेयर उपज मिल सकती है जबकि परंपरागत बीजू विधि से महज पांच से छह टन प्रति हैक्टेयर की उपज ली जा सकती है।

नई किस्मों के परंपरागत के मुकाबले विटामिन सी की मात्रा भी अधिक रहती है। बनारसी एवं कृष्णा किस्मों के आंवले 17-18 सप्ताह बाद तैयार हो जाते हैं। जबकि कंचन और फ्रांसिस किस्म के आंवले उगाने में 20 सप्ताह का समय लगता है। कलमी आंवले का पौधा लगाने के तीन साल बाद फसल मिलने लगते हैं जबकि बीजू पौधा 6-8 साल बाद फल देना प्रारंभ करता है।

कलमी पौधों में 10-12 साल बाद पूर्ण फल देने लगते हैं। इसका अच्छी तरह से रख-रखाव होने पर 60 से 75 साल तक फल लगते रहते हैं। एक पूर्ण विकसित आंवले का वृक्ष एक से तीन क्विंटल फल देता है। आज भारत में आंवले की खेती पांच लाख हैक्टेयर में की जाती है। इसका कुल उत्पादन 1.5 लाख टन होता है। आज आंवले का बाजार मूल्य कम से कम चार हजार रूपए प्रति क्विंटल मिल जाता है। इस तरह से किसान इसकी खेती करके प्रति हैक्टेयर दो लाख रूपए आय पा सकते हैं।

कलमी पौधे से आंवला की खेती करके अधिक लाभ कमाया जा सकता है। इस विधि से उगाए गए कलमी पौधे के आंवले काफी बड़े आकार के होते हैं। ये आंवले प्रोसेस्ड उत्पाद जैसे मुरब्बा आदि के लिए बेहतर होते हैं। जबकि बीजू पौधे से मध्यम और छोटे आकार का आंवला पैदा होता है। दूसरे तरह के प्रोसेस्ड उत्पाद जैसे त्रिफला चूर्ण, च्यवनप्राश, अमृतकलश आदि के लिए उपयुक्त होते हैं। इसकी मांग विदेशों में भी लगातार बढ़ती जा रही है। इस फल की यह भी खूबी है कि प्रोसेसिंग के लिए आंवले का हर हिस्सा उपयोगी होता है। इसके फलों में विटामिन सी की अत्याधिक मात्रा पाई जाती है। साथ ही लवण, कार्बोहाइड्रेट, फास्फोरस, कैल्शियम, लोहा एवं अन्य विटामिन भी होते हैं। इससे कई विकार जैसे क्षय रोग, दमा, मधुमेह स्मरण शक्ति की दुर्बलता से भी बचा जा सकता है।

आंवला एक शुष्क उप उष्ण जलवायु क्षेत्र का पौधा है। किंतु इसकी खेती उष्ण जलवायु में भी सफलतापूर्वक हो सकती है। भारत में इसकी खेती समुद्र तटीय क्षेत्र

से लेकर 1800 मीटर ऊंचाई वाले क्षेत्रों तक में ही सकती है। इसे बलुई भूमि से लेकर चिकनी मिट्टी तक में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। गहरी उर्वर बलुई दोमट मिट्टी आंवले की खेती के लिए सबसे उपयुक्त होती है। इसके अलावा बंजर, कम अम्लीय एवं उसर भूमि में भी इसकी खेती संभव है। परिपक्वता निर्धारण का सबसे अच्छा तरीका फलों के रंग में परिवर्तन (हरे से चमकदार सफेद हरा या पीला हरा) एवं बीज के रंग में परिवर्तन (हल्के पीले सफेद से भूरे रंग में) को देख कर किया जा सकता है।

इसके फल अम्लीय एवं कसैले होने के कारण तुरंत उपभोग हेतु उपयुक्त नहीं होते। इसके चलते इनके संसाधि पदार्थों के रूप में प्रयोग किया जाता है। किसानों को चाहिए कि इसके प्रसंस्करण के द्वारा नए उत्पाद तैयार कर बाजार में बिक्री करें। इससे उनकी आमदनी में बढ़ोत्तरी होगी।

खेती में कीटनाशकों के उपयोग में सुरक्षा

आधुनिक युग में हमारे किसान भाई अच्छी पैदावार विभिन्न प्रकार के उपक्रम कर रहे हैं जैसे उन्नत बीज, आधुनिक यंत्र तथा विभिन्न प्रकार की रासायनिक खाद एवं कीटनाशक आदि। बिना सोचे समझे इनका छिड़काव न केवल किसान परिवार वरन फसल को खाने वाले के स्वास्थ्य पर भी बुरा असर कर सकता है। आधुनिक फसल उत्पादन की तकनीक अत्यंत महंगी होने के कारण हमारे किसान भाई फसल की रक्षा के लिए तरह-तरह के कृषि रसायन जो एक प्रकार से जहर होते हैं, का उपयोग करने लगे है। हमारे कृषक भाईयों को समझ लेना चाहिए कि यदि कीटनाशक तत्व कृषि के लिए वरदान हैं तो स्वास्थ्य के लिए अभिशाप भी बन सकते हैं। अत: इनका प्रयोग अत्यन्त सावधानी पूर्वक एवं बहुत सोच समझ कर करना चाहिए। कृषि रसायन उस घातक और जहरीले रसायन की तरह है, जिससे जीवन रक्षा हो सकती है, परन्तु असावधानी पूर्ण प्रयोग जानलेवा भी साबित हो सकता है। इनके असुरक्षित प्रयोग से कीड़े मरने के साथ-साथ जानवर या मनुष्य भी चपेट में आ सकते है। कीटनाशक रसायनों का हम छ: भागों में बांट सकते हैं। इनमें पहला समूह ही जहरीला होता है जैसे डाई सल्फोटान, पैराथियान या क्लोरफेनविन फॉस आदि। दूसरे समूह थोड़ा कम जहरीला होता है जैसे हेप्टाक्लोर, मिथायलडेमिटान आदि इसी प्रकार घटते जहर के क्रम में छटा समूह आता है जिसमें मिथाक्सीक्लोर, परथेन एवं गंधक आदि सुरक्षित प्रकार के कीटनाशक प्रमुख हैं। इन सभी रसायनों का लापरवाही से प्रयोग करने पर कई प्रकार से जहर नुकसान पहुंचा सकता है। मुख्य रूप से मनुष्यों को जहर स्पर्श करने से या चमड़े द्वारा सोखने से, सूंघने से या खा लेने से असर करता है। कृषि रसायनों के असुरक्षित तथा लापरवाह प्रयोग करने से हम विभिन्न प्रकार से प्रभावित होते हैं।

रुधिर प्रवाह में रसायनों की वृद्धि से हृदय रोग एवं कैंसर की संभावना। पाचन तंत्र में धीरे-धीरे इन दवाओं का प्रवेश होते रहने से पेट में अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। फेफड़ों को संक्रमण व दमा होने की संभावना। अधिक समय तक रसायनों के संपर्क में रहने से दिमागी संतुलन भी प्रभावित हो सकता है। प्रजनन क्षमता में विकार आना। अब बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उसकी भोज्य समस्या को पूरा करने हेतु विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

यह सच है कि कृषि रसायनों के प्रयोग से हमें अत्यधिक लाभ मिला है। अत: एकदम से इनका प्रयोग कर नहीं किया जा सकता है। बल्कि हमें इन रसायनों को इस तरह इस्तेमाल करना चाहिए कि उनके लाभ ही हो किसी भी प्रकार की हानि नहीं हो। अत: हमारे कृषक भाईयों को निम्न बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए।

– चूंकि इन रसायनों से जहरीली गैस निकलती है। अत: दवा का घोल बनाने तथा उन्हें स्प्रेयरों इत्यादि में भरने का काम हमेशा खुले एवं हवादार स्थान पर ही करें।

– कभी भी इन रसायनों को खाद्य पदार्थों के साथ न रखें। हमेशा इनको इन्हीं के डिब्बों में असली लेबल लगा कर रखें।

– हमेशा फसल पर छिड़काव शरीर को ढककर हाथ पर रबड़ के दस्ताने आंखों पर चश्मा, जूते तथा मुंह पर मास्क लगाकर, जानकार लोगों की देखरेख में करना चाहिए।

– हमेशा छिड़काव हवा के विपरीत दिशा में करें, यदि रसायन की गंध महसूस हो तो गहरी सांस न ले कभी भी लगातार चार से पांच घंटे तक छिड़काव न करें। स्प्रेयर मशीन, खाली ड्रम एवं बाल्टी इत्यादि को कभी भी तालाब में न धोयें इससे तालाब का पानी जहरीला हो सकता है जिससे मछलियां एवं अन्य जीव मर सकते हैं।

– रसायनों को खेत में छिड़कने के समय कुछ न खाये और न ही बीड़ी, सिगरेट पियें, इससे सांस के साथ शरीर में जहर आ सकता है।

– कभी भी पालतू जानवरों के पास, उनके चारे इत्यादि के समीप कृषि रसायनों को न तो रखना चाहिए न ही उपयोग करना चाहिए।

– रसायनों को छिड़कने के तुरन्त बाद हाथ, मुंह, पांव आदि भलीभांति साबुन से धो लेने चाहिए।

सभी प्रकार के कृषि रसायनों को गोदाम या अलमारी में ताला लगाकर रखना चाहिए, बच्चों को इनकी पहुंच से दूर रखना चाहिए। रसायन के भंडार गृह के द्वार पर विष एवं बीड़ी सिगरेट पीना मना है का बोर्ड लगाकर रखना चाहिए। सावधानी ही बचने को एक मात्र सरल एवं सफल उपाय है।

– कभी भी फसल को काटते समय या तुरन्त पहले छिड़काव न करें, हमेशा कटाई के पन्द्रह बीस दिन पहले ही आखिरी छिड़काव कर देना चाहिए।

कीटनाशक रसायनों के उपयोग एवं रखरखाव में हमेशा ध्यान रखना चाहिए क्योंकि ये सभी घातक विष हैं। परन्तु उपरोक्त सावधानियों के बाद भी यदि किसी व्यक्ति के शरीर में कीटनाशक प्रवेश कर जाये तो उसका प्राथमिक इलाज डाक्टर के आने से पूर्व करना चाहिए। जैसे, रोगी के कपड़े उतार कर जहर लगे स्थान को साबुन से भलीभांति धोकर साफ करें। जहर सांस के साथ यदि अंदर चला गया हो तो बीमार को खुली हवा में रखें और अच्छी तरह से कपड़ों में लपेट दें। आंखों को हमेशा साफ पानी से छींटें मार कर धोयें। यदि रसायन मुंह के अंदर गया हो तो उल्टी करायें, जिसके लिए एक गिलास नमक मिला पानी पिलायें या पीड़ित व्यक्ति के गले में उंगली डालें। अचेत अवस्था में उल्टी न करायें बल्कि बेहोशी की हालत में रोगी को कृत्रिम सांस दिलायें। प्रभावित व्यक्ति को तत्काल कीटनाशी का एंटीडोज देना चाहिए। इस प्रकार से सावधानी बरत कर हमारे कृषक भाई कृषि रसायनों के कुप्रभाव से बच सकते हैं। इसके अतिरिक्त हमें जैविक कृषि पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे हम शनै: शनै: इस कृत्रिम रसायनों तथा उनकी मारक क्षमता से अपनी आने वाली पीढ़ियों को बचा सकेंगे।

जैविक खादों में पोषक तत्व

विभिन्न प्रदेशों की सरकारें जैविक खेती को प्रोत्साहित कर रही हैं। मध्य प्रदेश में 1565 गांवों में पूरी तरह जैविक खेती हो रही है। प्रदेश में 29 लाख हैक्टेयर भूमि जैविक खेती के लिए उपयुक्त पाई गई है। प्रदेश में जैविक क्षेत्रों का वयन किया जा रहा है। बेस लाइन सर्वे कर जैविक खेती करने वाले कृषक समूहों का निर्माण एवं पंजीयन किया जा रहा है। कृषि विभाग के द्वारा क्षेत्रों के अनुसार जैविक फसलों का चयन, नि:शुल्क मिट्टी का परीक्षण, जैविक खेती के लिए भुसधर हेतु चूना, रॉक सल्फेट एवं कम्पोस्ट उपयोग हेतु प्रोत्साहन अनुदान, जैविक खाद एवं जैविक कीट नियंत्रण हेतु प्रोत्साहन अनुदान, ऑनफार्म जैविक खाद हेतु कृषकों को सहायता एवं विभागीय अमले व कृषकों को जैविक खेती की प्रशिक्षण योजना से जैविक खेती के विस्तारीकरण में तेज़ी आई है।

जैविक कीट एवं व्याधि नियंत्रण : * 5 लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 किलो नीम के पत्ते डाल कर 10 दिन तक सड़ायें, बाद में नीम की पत्तियों को निचोड़ लें। इस नीम युक्त मिश्रण को छान कर 150 लीटर पानी में घोल बना कर प्रति एकड़ के मान से समान रूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियंत्रण होता है।

* 5 लीटर मट्ठे में 1 किलोग्राम नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डाल कर, 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छान कर इल्लियों का नियंत्रण करें।

* 5 किलोग्राम नीम के पत्ते 3 लीटर पानी में डाल कर उबाल लें। जब आधा रह जाए, तब उसे छान कर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गौ-मूत्र मिलाएं। अब यह मिश्रण एक एकड़ के मान से फसल पर छिड़कें।

* 1/2 किलोग्राम हरी मिर्च व लहसुन पीस कर 150 लीटर पानी में डाल कर छान लें तथा एक एकड़ में इस घोल का छिड़काव करें।

* मारूदाना, तुलसी (श्यामा) तथा गेंदे के पौधे फसल के बीच में लगाने से इल्ली का नियंत्रण होता है।

* गौमूत्र, कांच की शीशी में भर कर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गौमूत्र होगा, उतना अधिक असरकारी होगा। 12-15 मिलीलीटर गौमूत्र/लीटर पानी में मिलाकर स्प्रेयर पंप से फसलों में बुवाई के 15 दिन बाद, प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीटों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है, जिससे प्रकोप की संभावना कम रहती है।

* 100-150 मिलीलीटर छाछ 15 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करने से कीट-व्याधि का नियंत्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृषकों में लोकप्रिय है।

जैविक खेती करने वाले मध्य प्रदेश के किसानों के अनुभव :

* प्रीतिराज पटेल निवासी गाडरवारा विकास खंड सांइखड़ा, नरसिंहपुर जैविक खेती उत्पादन की दृष्टि से रासायनिक खेती से कई गुना बेहतर है, इसमें किसान स्वावलंबी बनता है एवं हवा, पानी और मिट्टी ज़हर से मुक्त होते हैं।

जैविक हरी खादों में पोषक तत्व (प्रतिशत में)

क्र.	जैविक खाद	पोटाश	फास्फोरस	नाइट्रोजन
1.	वर्मी कम्पोस्ट	0.67	2.20	1.60
2.	कम्पोस्ट	1.07	1.92	1.24
3.	प्रेस मड	1.31	1.34	1.59
4.	जल कुम्भी	2.30	1.00	2.00
5.	मुर्गी खाद	2.35	2.93	2.87
6.	नीम केक	1.4	1.00	5.2
7.	सनफ्लावर	1.9	2.2	7.9
8.	विनौला	1.6	1.8	2.5

* नागेन्द्र त्रिपाठी निवासी बम्होरी कला विकास खंड साइंखेड़ा नरसिंहपुर हमारे यहां जो रसायनों के आधार पर खेती हो रही है, उससे पर्यावरण का प्रदूषण बढ़ रहा है एवं मिट्टी का उपजाऊपन कम हो रहा है।

* विनीत उदेनिया निवासी पिपरिया, विकासखंड पिपरिया, ज़िला होशंगाबाद फर्टिलाइजर एवं रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग बंद करने से मेरे खेतों में करीब 25 प्रतिशत तक फसल की उत्पादकता बढ़ी है एवं प्रति एकड़ औसत मुनाफा में बढ़ोत्तरी हुई है।

जैविक खेती से उत्पन्न फसल ना केवल स्वास्थ्य के लिए वरन पर्यावरण के लिए भी अनुकूल होती है। जैविक कृषि पद्धति से उत्पादित शुद्ध आनाज, सब्ज़ी, फलों का सेवन करने से देश के लाखों करोड़ों रुपए (स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च) की बचत की जा सकती है।

जैविक कृषि पद्धति से सामाजिक समरसता बढ़ा कर अप्रत्यक्ष रूप से देश के आर्थिक विकास में सहभागी बना जा सकता है। हमारे स्वास्थ्य एवं सर्वांगीण विकास के लिए यह ज़रूरी है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित ना हों एवं शुद्ध वातावरण के साथ पोषक आहार मिले, इन सबका आधार सिर्फ जैविक खेती है।

रजनीगंधा में आनुवांशिक विविधता

ज्योति आर., कृषि विज्ञान केंद्र, गंगावटी, कोप्पल (कर्नाटक); कृष्ण पाल सिंह, भाकृअनुप–पुष्प विज्ञान अनुसंधान निदेशालय, कृषि कॉलेज परिसर, शिवाजीनगर पुणे (महाराष्ट्र); माम चंद सिंह, संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केंद्र, भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

फसल सुधार के लिए किसी भी पादप प्रजनन कार्यक्रम में आनुवंशिक विविधता को होना बहुत आवश्यक है। न्यूक्लियर प्रौद्योगिकी से विश्व में प्रवर्द्धित बीज व सब्जियों का आनुवंशिक सुधार करने में काफी लाभ मिला है। उच्च आकस्मिक परिवर्तन क्षमता हासिल करने के लिए उपयोग की जाने वाली मात्रा आमतौर पर विकिरण की प्रकृति, जैविक प्रणाली और विकिरण सुविधा के विशिष्ट गुणों पर निर्भर करती है। विश्व में पुष्प विज्ञान उद्योग ने काफी प्रगति की है। पुष्प उद्योग द्वारा नए मूल्यवर्द्धित पुष्प उत्पाद, जो कि लागत प्रभावी होते हैं और जिनमें पुष्प रंग, पुष्प आकृति, पुष्प बनावट एवं पौधे का रूप विज्ञान आदि अनूठे गुण होते हैं, को प्रदत्त कर उपभोक्ताओं की मांग को पूरा किया जाना चाहिए।

रासायनिक आकस्मिक परिवर्तन की तुलना में गामा विकिरण द्वारा उपचार से कई लाभ होते हैं; जैसे कि इनका कोई जरूरी प्रभाव नहीं होता; बेधन में एकरूपता होती है, खपत में कम समय लगता है और कम समय में अधिक नमूनों को उपचारित किया जा सकता है। इसके अलावा गामा विकिरण द्वारा उपयोगी उत्परिवर्ती नमूनों की कहीं अधिक संख्या प्रदान की जा सकती है और इसमें शाकीय रूप से प्रवर्द्धित पौधों में सुधार की भी कहीं अधिक क्षमता की संभावना है।

रजनीगंधा में अलंकारिक अथवा सजावटी शल्ककंद इसके अलावा जो कि जिओफाईट्स का एक सर्वाधिक खूबसूरत और भिन्न समूह है, को प्राचीन काल से ही पसंद किया जाता है। यह अलंकारिक अथवा सजावटी कंद विपुल वानस्पतिक समूह से संबंधित हैं और एक बीजपत्री पौधों का एक बड़ा परिवार है। बागवानी के दृष्टिकोण से इनका उपयोग मुख्यतः व्यावसायिक पुष्प-उत्पादन के लिए किया जाता है। इसमें बाह्य और प्रबलित कर्तित पुष्प तथा गमले में उगे पौधे शामिल हैं और भूदृश्य निर्माण के लिए इसमें निजी गार्डनिंग भी संभव है। शाकीय रूप से प्रवर्द्धित प्रजातियों में नए जीन प्ररूपों के उत्पादन और प्राकृतिक आनुवंशिक संसाधन में वृद्धि करने हेतु आकस्मिक परिवर्तन का उत्प्रेरण एक महत्वपूण तरीका है।

प्रयोगात्मक विधि :- वर्तमान प्रयोग में रजनीगंधा की दो किस्मों यथा प्रज्ज्वल और फुले रजनी में तीन विभिन्न कंद अवस्थाएं यथा B_0-ताजा तोड़े गए शल्ककंद (उखाड़ने वाले दिन विकिरण के लिए उपयोग किए गए कंद); B_1-उखाड़ने के तीन सप्ताह बाद (उखाड़ने के बाद शल्ककंदों को तीन सप्ताह तक कक्ष तापमान में भंडारित किया गया और तीसरे सप्ताह के अगले दिन विकिरण के लिए उपयोग किया गया); B_2-उखाड़ने के सप्ताह बाद (उखाड़ने के बाद शल्ककंदों को छः सप्ताह तक कक्ष तापमान में भंडारित किया गया और छठे सप्ताह के अगले दिन विकिरण के लिए उपयोग किया गया) तथा बिना किसी विकिरण वाले नियंत्रित उपचार (G_0-0 GY) के साथ-साथ गामा विकिरण की विभिन्न मात्राओं का उपयोग किया गया ताकि पुष्पीय पैरामीटरों (गुणों) के संबंध में उपयोगी आकस्मिक परिवर्तन को बड़ी संख्या में हासिल किया जा सकें। कुल मिलाकर प्रज्जवल तथा फुले रजनी किस्मों की सभी तीन-कंदीय अवस्थाओं से 3,888 कंदों पर विकिरण का उपयोग किया गया। इस प्रयोग से रजनीगंधा क लिए LD_{50} मात्रा उत्पन्न हुई। LD_{50} वह मात्रा है, जिस पर आमतौर पर 50 प्रतिशत पौध सामग्री जीवित रहती है। इसे नई किस्मों को उत्पन्न करने के प्रयोजन हेतु इष्टतम विकिरण मात्रा अथवा खुराक के रूप में स्वीकार किया गया है। इससे कटिंग की एक स्वीकार्य संख्या जीवित बनी रहती है, जबकि बड़ी संख्या में आकस्मिक परिवर्तन हासिल होते हैं।

प्रयोगात्मक परिणाम :- जमीन से उखाड़ गए कंदों की तीन सप्ताह की अवस्था (B_1) में व्यावसायिक किस्म, प्रज्ज्वल 2.5 Gy से अधिक गामा विकिरण मात्रा के प्रति अत्यधिक संवेदनशील पाई गई। अंततः निष्कर्ष है कि प्रज्जवल तथा फुले रजनी दोनों किस्मों की कंदीय अवस्था में शाकीय तथा पुष्पीय पैरामीटरों (गुणों) पर गामा विकिरण की 7.5 Gy तथा 10.0 Gy मात्रा का कहीं अधिक प्रभाव प्रदर्शित हुआ, जबकि 2.5 Gy और 5.0 Gy का कोई उल्लेखनीय प्रभाव नहीं पाया गया। कंदीय अवस्था की प्रतिक्रिया का क्रम क्रमशः B_1>B_2>B_1 था। रजनीगंधा की इन दोनों किस्मों में पुष्पीय आकस्मिक परिवर्तन उत्प्रेरण के लिए इष्टतम मात्रा 7.5 Gy से 11.5 Gy होगी। इस अध्ययन में यह पाया गया कि रजनीगंधा की दोनों किस्मों यथा प्रज्जवल और फुले रजनी के ताजा तोड़े गए कंद स्वः जीवे तथा साथ ही स्वः पात्रे परिस्थिति में उत्परिवर्तजन उत्प्रेरण के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। प्राईमरी गामा किरणित संख्या से नीचे वर्णित उत्परिवर्ती उत्पन्न किए गए जिनका रखरखाव vM_1 पीढ़ी के गामा विकिरण प्रभाव को जानने के बाद किया गया।

उपयुक्त पौधों में विकिरण प्रभाव के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है। कि व्यावसायिक किस्म प्रज्ज्वल से पुष्प की आकृति में दो पुष्पीय उत्परिवर्ती को उत्पन्न किया गया। एक उत्परिवर्ती में पंखुड़ी की आकृति दीर्घीकृत से गोलाकार आकृति में बदल गई। कणिश के सभी पुष्पकों में एक जैसी पंखुड़ी आकृति प्रदर्शित हुई। यह शल्ककंदों को उखाड़ने के छः सप्ताह वाली B_2 कंदीय अवस्था में पाई गई। 10 Gy की गामा विकिरण मात्रा पर दूसरी पुष्पीय आकृति वाले उत्परिवर्ती में पंखुड़ी की बढ़ी हुई लंबाई पाई गई। इसके साथ व्यावसायिक किस्म प्रज्ज्वल के सामान्य पुष्पकों की तुलना में इसके पुष्पक काफी बड़े थे। इसे उखाड़ने के उपरांत 2.5 Gy की गामा विकिरण मात्रा वाली B_1 कंदीय अवस्था में पाया गया।

इस उत्परिवर्ती को ताजा उखाड़े गए कंदों की B_0 अवस्था पर 7.5 Gy गामा विकिरण मात्रा से उत्पन्न किया गया। कणिश की लंबाई स्पाईक 94 सैं.मी. तक बढ़ी, जबकि सामान्य कणिश लगभग 70-74 सैं.मी. की होती है। इससे लंबे एवं ऊंचे उत्परिवर्ती प्राप्त हुए।

पौधे में मिले इस रंगीन पुष्प उत्परिवर्ती का स्वरूप भी वैसा ही था जैसा हमने vM_1 पीढ़ी में पाया था। इस उत्परिवर्ती को व्यावसायिक किस्म प्रज्ज्वल में ताजा उखाड़े गए कंदों की B_0 अवस्था पर 7.5 Gy गामा विकिरण मात्रा से उत्पन्न किया गया। साथ ही इस उत्परिवर्ती को व्यावसायिक किसम प्रज्ज्वल में ताजा उखाड़े गए कंदों की B_0 अवस्था पर 7.5 Gy गामा विकिरण मात्रा से उत्पन्न किया गया। इस उत्परिवर्ती में, वैयक्तिक पुष्पक छोटे हो गए, जो कि समान स्थान अंतराल में व्यवस्थित हैं।

इसके अलावा एक ऐसा उत्परिवर्ती मिला जिसमें शबलित अथवा कर्बुर (वैरीगेटिड) पत्ती है। इस उत्परिवर्ती को व्यावसायिक किस्म फुले रजनी में ताजा उखाड़े गए कंदों की B_0 अवस्था पर 10 Gy गामा विकिरण मात्रा से उत्पन्न किया गया। इस उत्परिवर्ती में पत्ती के मध्य में सफेद रंग का बैंड बना। कंद से उभरने वाली सभी पत्तियों में एक जैसा पैटर्न प्रदर्शित हुआ। इस उत्परिवर्ती को मात कंद से अलग किया गया और गमले में स्थानांतरित करके इसका रखरखाव किया गया।

रजनीगंधा (पॉलियेन्थस टयूबरोजा एल.) एक उष्णकटिबंधीय और अर्ध-उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण कंदाकार पुष्पीय पौधों में से एक है। यह मुख्यः मोनोकॉट वंश का है और बारह मासी है। कर्तित पुष्प, खुले पुष्प, भूदृश्य गार्डनिंग के रूप में और साथ ही उच्च मूल्य वाले प्राकृतिक पुष्प तेल का निष्कर्षण करने हेतु अपनी लोकप्रियता के कारण रजनीगंधा का पुष्प उत्पादन में एक मुख्य स्थान है। इसकी लंबी तथा सीधी कणिष, जिनमें चमकीले सफेद पुष्पक होते हैं, के कारण पुष की सौम्य सुंदरता अधिक प्रदर्शित होती है। रजनीगंधा के आनुवंशिक सुधार में अल्प आनुवंशिक विविधता, स्वः अनिषेच्य एवं होती है। रजनीगंधा सहित अनेक शाकीय रूप से प्रवर्द्धित पौधों में जटिल शरीर क्रिया विज्ञान (यथा प्रसुप्ता अवधि) तथा जटिल आनुवंशिकी (यथा विषम-युग्मजता, स्वः अनिषेच्य का उच्च स्तर) पाई जाती है। नवीन व्यावसायिक किस्मों को दो तरीकों से तैयार किया जा सकता है। वर्तमान, दो किस्मों के बीच संकरण के परिणामस्वरूप अत्यधिक परिवर्ती संतति उत्पन्न होती है, जिससे अच्छी किस्मों का चयन किया जा सकता है। रजनीगंधा में बीज स्थापन एक कठिन प्रक्रिया होती है और यह आमतौर पर एकल प्रवृति की किस्मों में सिर्फ कुछ में ही पाई जाती है न कि सभी एकल प्रवृति वाली किस्मों में। साथ ही यह एक अनियमित रीति में पाई जाती है। बीज अंकुरण भी अपेक्षाकृत कम होता है और बीज स्थापन दोहरी प्रवृति वाली किस्मों में नहीं होता। इसलिए उत्पादक को प्रजनन कार्यक्रम के लिए मादा पैतृक के रूप में सदैव रजनीगंधा की एकल प्रवृति के ही किस्मों का ही चयन करना है। रजनीगंधा में लैंगिक प्रजनन के तहत बीज (शल्ककंद) से पुष्पन तक लगभग तीन फसलीय मौसमों का समय लगता है। इसके फलस्वरूप स्टॉक (मातृ) पौधों का गुणनीकरण करने में कई वर्ष का समय लगता है।

मानव स्वास्थ्य और बाजरा

दुनिया के शुष्क भूमि क्षेत्रों में बाजरा एक पारम्परिक प्रधान भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत 6.98 मिलियन (69.8 लाख) हैक्टेयर के क्षेत्रफल में से 8.06 मिलियन (80.6 लाख) टन वार्षिक उत्पादन के साथ बाजरा का सबसे बड़ा उत्पादक है और देश की खाद्यान्न टोकरी में 10 प्रतिशत योगदान करता है। बाजरा में अन्य मिलेट्स की तुलना में काफी अधिक मात्रा में प्रोटीन (12-16 प्रतिशत) और वसा (4-6 प्रतिशत) पाई जाती है।

100 ग्राम बाजरे में निम्नलिखित पोषण तत्व होते हैं : ऊर्जा 360 कैलोरी, नमी 12 ग्राम, प्रोटीन 12 ग्राम, वसा 5 ग्राम, खनिज 2 ग्राम, रेशा 1 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट 67 ग्राम, कैल्शियम 42 मिलीग्राम, फास्फोरस 242 मिलीग्राम और लोहा 8 मिलीग्राम। बाजरा में मौजूद महत्वपूर्ण पोषक तत्वों में प्रतिरोधी स्टार्च, ऑलिगोसेकेराइड, वसा, प्रति उपाचक जैसे कि फिनोलिक अम्ल, एवेनथ्रा माइड्स, फ्लेवोनोइड्स, लिग्नान्स और फाइटोस्टेरॉल शामिल हैं, जो कई स्वास्थ्य संबंधी लाभों के लिए जिम्मेदार माने जाते हैं।

बाजरा से स्वास्थ्य संबंधित तथ्य : खनिजों और प्रोटीन की अधिक मात्रा के कारण, बाजरा के कई स्वास्थ्य संबंधित लाभ हैं। इसमें प्रोटीन के अतिरिक्त मैग्नीशियम, फास्फोरस, जस्ता आदि जैसे कई आवश्यक खनिज होते हैं एवं आवश्यक अमीनो अम्ल व विटामिन्स भी होते हैं, जो इसके निम्नलिखित चिकित्सीय गुणों में योगदान करते हैं।

पेट के अल्सर के इलाज में फायदेमंद : पेट के अल्सर को ठीक करने के लिए बाजरा की सलाह दी जाती है। पेट के अल्सर का सबसे आम कारण भोजन के सेवन के बाद पेट में अतिरिक्त अम्लता है। बाजरा बहुत कम खाद्य पदार्थों में से एक है, जो पेट की क्षारीयता को बदल देता है और पेट के अल्सर को रोकता है या अल्सर के प्रभाव को कम करता है।

हृदय की सेहत के लिए फायदेमंद : बाजरे में लिग्नान्स और फाइटो स्टेरॉल मजबूत प्रति उपाचक के रूप में काम करते हैं और इस तरह हृदय से संबंधित बीमारियों को रोकते हैं। यही कारण है कि बाजरा हृदय स्वास्थ्य के लिए अच्छा माना जाता है। बाजरा में मौजूद मैग्नीशियम की उच्च मात्रा रक्तचाप को नियंत्रित करने और हृदय के तनाव से राहत देने में सहायक है।

मैग्नीशियम की उच्च मात्रा के कारण लाभकारी : बाजरा में मैग्नीशियम की उच्च सांद्रता होती है, जो अस्थमा रोगियों के लिए श्वसन समस्याओं को गंभीरता को कम करने में मदद करता है और माइग्रेन को कम करने में भी प्रभावी है।

हड्डी के विकास और मुरम्मत में मददगार : बाजरा में फास्फोरस की उच्च मात्रा होती है, जोकि हड्डियों की वृद्धि और साथ-साथ एटीपी के विकास के लिए फास्फोरस बहुत आवश्यक है, जो हमारे शरीर की ऊर्जा मुद्रा है।

कैंसर जनित रोगों में उपयोगिता : बाजरा कैंसर होने के जोखिम को कम करने के लिए जाना जाता है। संभवतया इसका कारण फाइटेट यौगिक एवं मैग्नीशियम की उच्च मात्रा हो सकती है।

मोटापे में मददगार : वज़न कम करने की कोशिश कर रहे लोगों के सामने सबसे बड़ी चुनौती उनके भोजन के सेवन को नियंत्रित करना है। बाजरा वज़न घटाने की प्रक्रिया में सहायता कर सकता है, क्योंकि बाजरा में रेशे की मात्रा अधिक होती है, जिसकी वजह से पचाने में समय लेता है। इस तरह, बाजरा लंबे समय तक भूख मिटाता है और इस तरह भोजन की खपत को कम करने में मदद करता है।

मधुमेह के लिए फायदेमंद : मधुमेह को नियंत्रित करने के लिए बाजरा बहुत प्रभावी है। इसकी उच्च रेशे की मात्रा के कारण, यह धीरे-धीरे पचता है और रक्त में ग्लूकोज़ को अन्य खाद्य पदार्थों की तुलना में धीमी गति से मुक्त करता है। बाजरा इंसुलिन संवेदनशीलता बढ़ाने और ट्राइग्लिसराइड्स के स्तर को कम करने के लिए जाना जाता है। यह प्रभावी रूप से मधुमेह रोगियों में रक्त शर्करा के स्तर को लंबे समय तक बनाए रखने में मदद करता है।

उदरीय रोग के लिए फायदेमंद : उदरीय रोग एक ऐसी स्थिति है, जिसमें व्यक्ति अपने आहार में ग्लूटेज की थोड़ी मात्रा भी बर्दाश्त नहीं कर सकता है। दुर्भाग्य से, अधिकांश सामान्य आनाज जैसे चावल, गेहूं आदि में ग्लूटेन मौजूद होता है। बाजरा एकमात्र ऐसा आनाज है, जिसमें कोई ग्लूटेज मौजूद नहीं होता है। इस प्रकार यह उदरीय रोग वाले रोगों के लिए उपयुक्त है।

कोलेस्ट्रॉल में कमी : यह सामान्य बात है कि बाजरा उच्च कोलेस्ट्रॉल स्तर से पीड़ित लोगों के लिए सुझाया जाता है। बाजरा में एक प्रकार का फाइटो केमिकल होता है, जिसे फाइटिक अम्ल कहा जाता है, जो कोलेस्ट्रॉल के चयापचय को बढ़ाने और शरीर में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को स्थिर करने के लिए माना जाता है।

सभी आवश्यक अमीनो अम्ल : अमीनो अम्ल हमारे शरीर के सुचारू संचालन के लिए आवश्यक है। बाजरा खाद्य पदार्थों में से एक है, जिसमें सभी आवश्यक अमीनो अम्ल होते हैं। इनमें से अधिकांश अमीनो अम्ल खाना पकाने की प्रक्रिया में खो जाते हैं, क्योंकि ये अमीनो अम्ल उच्च तापमान को सहन नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार कम पके हुए रूप में सेवन करना बेहतर होता है, ताकि इन अमीनो अम्ल में से कुछ को संरक्षित किया जा सके।

पित्ते की पत्थरी को रोकने में फायदेमंद : बाजरा में उच्च रेशे की मात्रा के कारण पित्ते की पत्थरी होने के जोखिम को कम करने के लिए भी जाना जाता है। बाजरा में उपस्थित अघुलनशील रेशे हमारे तंत्र में अत्याधिक पित्त के उत्पादन को कम करते हैं।

एंटी-एलर्जी गुण : बाजरा लाभकारी गुणों का खजाना है। इसका बीज बहुत सुपाच्य होता है और इससे एलर्जी की संभावना बहुत कम होती है। इसके हाइपो-एलर्जिक गुण के कारण, इसे शिशुओं, स्तनपान करवाने वाली माताओं, बुजुर्गों के आहार में सुरक्षित रूप से शामिल किया जा सकता है।

अन्य उपयोग : चिकित्सा विज्ञान के अध्ययन से पता चला है कि बाजरा के उपयोग से शरीर को विष विहीन करता है, श्वसन स्वास्थ्य में प्रतिरक्षा बढ़ाता है, ऊर्जा का स्तर बढ़ाता है और मांसपेशियों में सुधार होता है और तंत्रिका तंत्र और उपापचय सिंड्रोम और पार्किंसंस रोग जैसे कई अपक्षयी रोगों के खिलाफ सुरक्षात्मक है।

बाजरा की कम लोकप्रियता के कारण :

1. किसानों और प्रोसेसर के बीच तकनीकी-जानकारियों का अभाव।
2. भोजन को अपनाने और विविधीकरण में सांस्कृतिक मुद्दों का अभाव।
3. बाजरा के पोषक तत्वों के बारे में लोगों में जागरूकता की कमी और एक आम राय है कि बाजरा गरीब आदमी का भोजन है।
4. उपभोक्ताओं को खरीदने और उपभोक्ता के बीच अनिच्छा।

शेष पृष्ठ 3 की

वर्षा के अभाव का धान की पत्ती लपेट...

की आबादी तेजी से बढ़ती है।

लगातार वर्षा होने पर खेतों में पानी भराव, तेज वर्षा तथा तेज हवाएं कीट की गतिविधियों को प्रभावित करती हैं, पतंगों की उड़ान बाधित होती है तथा उनकी सक्रियता कम हो जाती है। साथ ही, पत्तियों पर दिए गए अंडे तथा नवजात सुंडियां वर्षा की बूंदों के प्रभाव से बह जाती हैं या नष्ट हो जाती हैं। इसे वर्षा का प्राकृतिक

"Washing Effect or Natural Control" कहा जाता है, जो कीट की प्रारंभिक आबादी को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अधिक नमी के कारण कई प्रकार के रोगजनक सूक्ष्मजीव (जैसे कवक) भी सक्रिय हो जाते हैं, जो कीट के अंडों एवं सुंडियों की मृत्यु दर बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त, मकड़ियां, परभक्षी कीट तथा परजीवी ततैया जैसे प्राकृतिक शत्रुओं की सक्रियता भी बढ़ सकती है, जिससे पत्ती लपेटक की आबादी नियंत्रित रहती है। इसके विपरीत, जुलाई में कम वर्षा, 30-34°C तापमान, पर्याप्त धूप तथा सिंचित खेतों में उपलब्ध नमी का संयोजन पत्ती लपेटक के लिए अत्यंत अनुकूल सूक्ष्म वातावरण (Microclimate) तैयार करता है। ऐसी परिस्थितियों में अंडों से सुंडियों के निकलने की दर अधिक होती है, सुंडियां शीघ्रता से विकसित होती हैं तथा एक पीढ़ी का जीवन चक्र कम समय में पूरा हो जाता है। परिणामस्वरूप अगस्त एवं सितंबर में इस कीट की आबादी तेजी से बढ़ जाती है।

अत: सिंचित धान उत्पादन प्रणाली में जुलाई माह में वर्षा का अभाव धान की पत्ती लपेट कीट के अधिक प्रकोप का एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है, जबकि लगातार वर्षा होने पर इसका प्रकोप अपेक्षाकृत कम देखा जाता है। यह स्थिति विशेष रूप से तब अधिक स्पष्ट होती है जब वर्षा कम होने के बावजूद सिंचाई नियमित रूप से उपलब्ध रहती है और फसल की बढ़वार सामान्य बनी रहती है।

विवेक शर्मा

जलभराव की चुनौती

बेहतर तैयारी ही जल निकासी संकट का समाधान

देश के अधिकतर शहरों में हर वर्ष मानसून के दौरान जलभराव की समस्या आती है। जिसकी वजह अधिक मात्रा में बारिश होना नहीं, बल्कि नियोजन की खामियां हैं। दरअसल, शहरों का विस्तार हुआ लेकिन उनके अनुपात में जल निकासी के इंतजाम नहीं हुए। ऊपर से कुदरती जल स्रोतों व नालों पर अतिक्रमण हो गया।

मानसून आते ही शहरों का जलमग्न होना अब एक आम बात हो गई है। यह केवल मौसम की चुनौती नहीं, बल्कि हमारे शहरी नियोजन की उस विफलता का परिणाम है, जिसमें कंक्रीट के जंगल तो खड़े कर दिए गए, लेकिन पानी की निकासी के प्राकृतिक रास्ते बंद कर दिए।

भारत में मानसून केवल एक मौसम नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक उत्सव है। लेकिन हमारे आधुनिक शहरों में इसकी दस्तक अक्सर एक खौफनाक दु:स्वप्न में बदल जाती है। हर वर्ष की बरसात यह साफ कर देती है कि शहर आसमान से बरसने वाले पानी में नहीं, बल्कि अपनी योजनाओं की कमियों और प्रशासनिक विफलताओं में डूबते हैं। कुछ घंटों की तेज बरसात हमारे तथाकथित आधुनिक शहरी नियोजन की तमाम कमजोरियों को उजागर कर देती है। सड़कें जलमग्न हो जाती हैं, यातायात थम जाता है, बाजारों में पानी भर जाता है और लोगों की दिनचर्या बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो जाती है। मौसम साफ होते ही नगर निगमों की समीक्षा बैठकों, दावों और आश्वासनों का अंतहीन सिलसिला शुरू हो जाता है। फाइलें आगे बढ़ती हैं, बजट पास होते हैं, लेकिन अगले वर्ष फिर भयावह हालात सामने आते हैं। मूल सवाल यह नहीं कि वर्षा कितनी हुई, बल्कि यह कि हमारे 'स्मार्ट' होते शहर हर साल पानी के सामने इतने बेबस क्यों साबित होते हैं।

हर बरसात हमें एक बेहद असहज सच का आईना दिखाती है कि हमने शहरों का अंधाधुंध विस्तार तो किया, लेकिन उनकी बुनियादी क्षमता और जल निकासी अवसंरचना को उसी अनुपात में मजबूत नहीं किया। आबादी तेजी से बढ़ी, गगनचुंबी इमारतें खड़ी हुईं और सड़कें चौड़ी की गईं, लेकिन इस कंक्रीट के जंगल में वर्षा के पानी के लिए प्राकृतिक जगह लगातार सिकुड़ती गई। यही कारण है कि महज कुछ घंटों की बरसात पूरे शहरी ढांचे की नींव हिला देती है। यह केवल मौसम की अप्रत्याशित चुनौती नहीं, बल्कि हमारी अदूरदर्शी विकास नीति और शहरी नियोजन की भी कड़ी परीक्षा है, जिसमें हम लगातार विफल हो रहे हैं।

असल समस्या वर्षा नहीं, बल्कि हमारी विकास की मौजूदा सोच है। शहर जितनी बेतहाशा रफ्तार से फैले, उतनी तेजी से उनकी जल निकासी व्यवस्था (ड्रेनेज सिस्टम) को नहीं सुधारा गया। विकास और पर्यावरण के बीच का यही असंतुलन हर बरसात में सड़कों पर तैरता दिखाई देता है। नई पॉश कॉलोनियां बसती गईं, फ्लाईओवर और एक्सप्रेसवे बनते गए, लेकिन सदियों पुराने तालाब, जोहड़, झीलें और प्राकृतिक नाले लगातार अतिक्रमण का शिकार होकर सिमटते गए। पानी का अपना प्राकृतिक ढलान और प्रवाह होता है। जब विकास के नाम पर हमने उसका मार्ग अवरुद्ध कर दिया, तो उसने पक्की सड़कों को ही अपना नया रास्ता बना लिया।

हमने कागजों पर शहरों का नक्शा तो बदल दिया, लेकिन पानी का मूल स्वभाव नहीं बदल सके। जहां कभी बड़े-बड़े तालाब और शहर का पानी बाहर ले जाने वाले प्राकृतिक नाले थे, वहां आज बहुमंजिला इमारतें और चमचमाती सड़कें खड़ी हैं। पानी अपनी पुरानी राह नहीं भूलता। हर वर्ष वह हमें कठोरता से याद दिलाता है कि प्रकृति के नियम इंसानों द्वारा बनाए गए मास्टर प्लान से नहीं बदलते। किसी भी आधुनिक शहर की असली ताकत केवल

उसकी ऊंची इमारतों में नहीं, बल्कि उसकी सुदृढ़ जल निकासी व्यवस्था, हरित क्षेत्रों और प्राकृतिक जल स्रोतों के संरक्षण में निहित होती है। इन्हें नजरअंदाज करके किया गया विकास पहली ही तेज बरसात में अपनी कमजोरियां उजागर कर देता है। चिंताजनक है कि यह समस्या अब महानगरों तक सीमित नहीं रही है। तेजी से विकास की दौड़ में शामिल हो रहे छोटे और मध्यम शहर (टियर-2 और टियर-3) भी हर वर्ष इसी जलभराव से जूझ रहे हैं। मानसून से पहले नालों की सफाई (डिसिल्टिंग) के दावे पहली ही बरसात में पानी में बह जाते हैं। वहीं दूसरी ओर, पॉलीथीन व ठोस कचरे का नालों में बहाया जाना तथा अतिक्रमण निकासी प्रणाली को अवरुद्ध कर देते हैं। यह केवल प्रशासन की विफलता नहीं, बल्कि नागरिकों की भी साझा जिम्मेदारी का प्रश्न है।

इस कुप्रबंधन का सबसे अधिक नुकसान आम नागरिक को उठाना पड़ता है। घंटों जाम में फंसा कर्मचारी, जलमग्न सड़कों के बीच अस्पताल पहुंचने के लिए संघर्षरत मरीज, प्रभावित छोटे व्यापारी और दिहाड़ी मजदूर, सभी इसकी भारी कीमत चुकाते हैं। अंडरपास में जलभराव से होने वाले हादसे आम हो गए हैं। इसके बाद डेंगू, मलेरिया और टाइफाइड जैसी जलजनित बीमारियों का खतरा भी बढ़ जाता है। इसलिए, यह केवल सड़क पर जमा पानी का मुद्दा नहीं, बल्कि सार्वजनिक स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था और जीवन की गुणवत्ता का भी प्रश्न है।

जलवायु परिवर्तन ने इस चुनौती को और कठिन बना दिया है। अब कम समय में अत्यधिक वर्षा (क्लाउड बर्स्ट) की घटनाएं बढ़ रही हैं, जबकि अधिकांश शहरों का ड्रेनेज ढांचा पुराने मानकों पर आधारित है और इस नए दबाव को झेलने में असमर्थ है। दुनिया के कई शहर अब वर्षा के पानी को बोझ नहीं, बल्कि संसाधन मानकर 'स्पंज सिटी' मॉडल अपना रहे हैं, जिसमें वर्षा के पानी को जमीन में समाने, संरक्षित करने और पुन: उपयोग के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, ताकि जलभराव कम हो और भूजल भी रिचार्ज हो सके। भारतीय शहरों को भी यही दूरदर्शी दृष्टि अपनानी होगी।

जी.एन.-1 से जी.एन.-7 और गंगियां सिंधूरी समेत 8 देसी आम की किस्में खेती के लिए चुनीं

देसी आमों की विरासत लुप्त, 53 साल में 80+ दुर्लभ किस्में सहेजीं

पंजाब के गांवों और कंडी क्षेत्र में कभी देसी आम के पेड़ हर घर और खेत की पहचान हुआ करते थे। समय के साथ इनकी संख्या कम हुई, तो कई पारम्परिक किस्में भी धीरे-धीरे गायब होने लगीं। इन्हीं किस्मों को संरक्षित करने के लिए पंजाब कृषि विश्वविद्यालय (पी.ए.यू.) पिछले 53 साल से काम कर रहा है।

आज होशियारपुर के गंगियां स्थित एम.एस. रंधावा फल अनुसंधान केन्द्र में चूस कर खाने वाले देसी आमों की 80 से अधिक दुर्लभ किस्में सुरक्षित हैं। साथ ही आचार वाली 15 और करीब 55 ग्राफ्टेड किस्में सुरक्षित की गई हैं। गंगियां में लगा 'पूसा श्रेष्ठ' आम, जिस पर अभी रिसर्च जारी है।

अंडा दशहरी, लड्डू आम, अनामी छल्ली जैसी किस्मों की पहचान

24 नवम्बर, 1973 को इस अनुसंधान केन्द्र की स्थापना पंजाब के उत्कृष्ट देसी आमों की पहचान, संरक्षण और वैज्ञानिक मूल्यांकन के उद्देश्य से की गई। पंजाब में आम की खेती मुख्य रूप से उप-पहाड़ी और कंडी क्षेत्रों में होती है। यहां लंबे समय तक

बीज से पौधे तैयार होने के कारण प्राकृतिक रूप से बड़ी आनुवंशिक विविधता विकसित हुई। इसी वजह से स्वाद, रंग, रस, गूदे और उत्पादन क्षमता में एक-दूसरे से अलग कई स्थानीय किस्में सामने आईं। वर्ष 2008 में पंजाब जै विविधता बोर्ड के सहयोग से हुए सर्वेक्षण में अंडा दशहरी, लड्डू आम, गोला घस्सीपुर, बेर आम, अनामी छल्ली, छोए सिंधूरी, महंतां दी लालटेन और सिंधूरी चूसा जैसी स्थानीय किस्मों की पहचान की गई। इनके पौधे भी अनुसंधान केन्द्र में सुरक्षित रखे गए हैं। होशियारपुर के बस्सी उमर खान गांव का लगभग 150 वर्ष पुराना इनामी बाग अब मैंगो हेरिटेज साइट घोषित किया जा चुका है। किसानों और व्यापारियों को सलाह है कि आम पकाने के लिए कैल्शियम कार्बाइड के बजाय एथ्रेल (एथेफोन) का उपयोग करें तथा पैकिंग से पहले फलों को हल्के कीटाणुनाशक घोल से धोकर छाया में सुखाएं।

60 से अधिक किस्मों का चयन

वैज्ञानिकों ने होशियारपुर और आस-पास के क्षेत्रों का सर्वे कर 60 से अधिक उत्कृष्ट देसी आमों का चयन किया। इन्हें जी.एन.-1 से जी.एन.-60 तक कोड दिया गया। विस्तृत मूल्यांकन के बाद जी.एन.-1 से जी.एन.-7 और गंगियां सिंधूरी को खेती के लिए अनुशंसित किया गया। इनमें बेहतर स्वाद, अधिक रस, कम रेशा और छोटी गुठली जैसे गुण हैं। इनके पौधे किसानों को उपलब्ध करवाए जा रहे हैं, ताकि देसी आमों की यह विरासत फिर से बागों तक पहुंच सके। वर्ष 2016 से अनुसंधान केन्द्र में नई आम की किस्में विकसित करने का कार्यक्रम चल रहा है। उद्देश्य ऐसी किस्में तैयार करना है, जो नियमित फल दें, जल्दी तैयार हों, आकर्षक हों और अधिक समय तक सुरक्षित रह सकें। देश के विभिन्न कृषि संस्थानों से लाई गई किस्मों का भी पंजाब की परिस्थितियों में परीक्षण किया जा रहा है।

कोलंबिया ने 8,80,000 पेड़ लगा कर कम किया तापमान

दुनिया में एक ऐसा शहर भी है, जहां पेड़ लगाने की पहल ने तापमान को कई डिग्री तक कम कर दिया है। ऐसा कोलंबिया के मेडेलिन शहर में हुआ है। 2013 में यहां कंक्रीट की सड़कों के दोनों ओर बस ऊंची-ऊंची कांच

की इमारतें ही नज़र आती थीं। यहां ग्रीन कॉरिडोर प्रोजैक्ट लांच हुआ और 8,80,000 पेड़ लगाए, जिससे 10 साल में तापमान में बड़ी गिरावट दर्ज की गई।

मेडेलिन की क्रांति ने दुनिया का खींचा ध्यान

मेडेलिन सिटी गवर्नमैंट के मुताबिक शहर का तापमान ग्रीन कॉरिडार प्रोजैक्ट से तकरीबन 4 डिग्री सैल्सियस तक घटा है। पहले यहां का औसतन वायु तापमान 31 डिग्री सैल्सियस रहता था, जो अब 27 डिग्री सैल्सियस है। वहीं सतह का तापमान 40.5 डिग्री सैल्सियस से घटकर 30.2 डिग्री सैल्सियस तक आ गया। खुद युनाइटेड नेशंस एनवायरमैंट प्रोग्राम ने भी इसकी तारीफ की है।

कोलंबिया का दिल है मेडेलिन

मेडेलिन शहर कोलंबिया के उत्तर पश्चिम में स्थित है। इस शहर को सदाबहार बसंत का शहर भी कहते है, क्योंकि अब यहां का मौसम साल भर सुहावना रहता है। शहर में 40 लाख से अधिक लोग रहते हैं और जी.डी.पी. तकरीबन 35 अरब डॉलर है। कभी यह शहर ड्रग कार्टेल के लिए कुख्यात था। 21वीं सदी में शहर ने खुद को बदला और अब ये शहरी नियोजन की वजह से दुनिया भर में पहचाना जा रहा है। अर्बन लैंड इंस्टीट्यूट की ओर से इस शहर को दुनिया का सबसे इनोवेटिव शहर घोषित किया जा चुका है।

आपातकाल बन रही थी गर्मी

मेडेलिन ने गर्मी एक समस्या नहीं बल्कि आपातकाल बनती जा रही थी। शहर में पी.एम. 2.5 का स्तर बढ़ रहा था। 2020 में अंतियोकिया विश्वविद्यालय के एक अध्ययन ने निष्कर्ष निकाला कि 2016 में अर्बुरा घाटी क्षेत्र में प्रदूषण के कारण 1,971 असमय मौतें हुई थी। मेडेलिन के पर्यावरण सचिव जोहान लोंदोनो ने एक इंटरव्यू में कहा था कि कभी हम सदाबहार बसंत का शहर कहलाते है, लेकिन हम बढ़ते तापमान को महसूस कर रहे है। हर साल गर्मी बढ़ रही है। वायु प्रदूषण के कारण सांस की बीमारियां बढ़ रही थी, बच्चे और बुजुर्ग सबसे अधिक प्रभावित हो रहे थे।

पेड़ों से कैसे कम हुआ तापमान?

1. छाया : यह सबसे सरल और प्रत्यक्ष प्रक्रिया है। पेड़ सूरज की किरणों को ज़मीन और कंक्रीट तक पहुंचने से रोकते है।

2. गर्मी सोखते है पेड़ : पेड़ एक नेचुरल एयरकंडीशन की तरह काम करता है। हरी पत्तियां हवा से गर्मी को सोख लेती है।

3. हवा का दबाव : पेड़ों से शहर में हवा का प्रवाह बना रहता है। ऐसे में हवा गर्म होने की बजाय ठंडी होती है।

कोलंबिया में हुआ सबसे बड़ा फ्लावर फेस्टिवल

कोलंबिया के मेडेलिन शहर में 'फ्लावर फेस्टिवल' (फेरिया दे लास फ्लोरेंस) का भव्य आयोजन किया गया। उत्सव की शुरूआत के साथ ही शहर के मशहूर सांताफे शॉपिंग मॉल के 1 हज़ार वर्ग मीटर प्रांगण को फूलों के कालीन से सजाया गया। इसके ठीक ऊपर ताज़े फूलों से निर्मित विश्व शांति के प्रतीक सफेद कबूतर की एक विशाल कलाकृति लगाई गई।

** इसे तैयार करने के लिए पेटुनिया और मैरीगोल्ड प्रजाति के पौधे और 2.2 लाख से ज्यादा प्राकृतिक फूलों का इस्तेमाल किया गया। 10 दिनों तक शहर के अलग-अलग हिस्सों को ऐसे ही फूलों से महकाया गया।*

** इस पूरे फेस्टिवल में ऑर्किड, गुलाब, कार्नेशन, लिली जैसे 100 से अधिक स्थानीय व विदेशी प्रजातियों के 20 लाख से ज्यादा फूलों का उपयोग किया गया। उत्सव का समापन 9 अगस्त को हुआ, जिसमें स्थानीय किसान अपनी पीठ पर 100 किलो से भी भारी फूलों के ढांचे उठाकर चले। इसे देखने के लिए देश-विदेश से लाखों पर्यटक आए थे।*

श्रावन मास का मानव जीवन के साथ अटूट सम्बन्ध

डॉ. देवी दयाल नारंग,
वरिष्ठ वैज्ञानिक
(सेवा-निवृत), पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना
(मो.94647-20231)

अब इस तथ्य को विशेषज्ञ एक मत से स्वीकार करते हैं कि जिस देश में वन जितने सघन होंगे, वहां नदियां भी बहुत कम उफनेंगी और जहां वन-सम्पदा का नाश किया जाएगा, वहां बाढ़ संकट भी दिनों-दिन बढ़ता ही जाएगा। नतीजा यह है कि जितने घट सघनता वाले पहाड़ी इलाके हैं, वहां शहरीकरण के कारण अधिक वर्षा के रूप में पानी की बूंदें ज़मीन पर गिरती हैं, उनमें वेग होता है और वह ज़मीन को काटती हैं, जबकि सघन वृक्ष, वनस्पति पानी के वेग को कम कर देते हैं। पेड़-पौधों द्वारा वर्षा का बहुत सा जल सोख लिया जाता है, जबकि खुले मैदानों में वह पानी बह जाता है।

मनुष्य और वृक्ष का जीवन परस्पर अति घनिष्ठता के साथ जुड़ा हुआ है। मनुष्य श्वास द्वारा जो गंदी वायु बाहर निकालता है, वृक्ष उसे पी (जज्ब) लेते हैं। फिर उस वायु को शुद्ध करके प्राण वायु के रूप में मनुष्य को वापिस लौटा देता है। यह अदान-प्रदान वायुमंडल की शुद्धि पर निर्भर है।

परन्तु तेज़ी से बढ़ते जा रहे यंत्रीकरण के इस युग में तो वृक्षों का महत्व और भी बढ़ गया है। यह तो सभी जानते हैं कि हवा का मिलना ही पर्याप्त नहीं है। हवा मिलने से भी ज्यादा आवश्यक, उसका शुद्ध होना है।

इन दिनों बड़े-बड़े कारखाने, रेल-मोटरें, वैज्ञानिक प्रयोगशालाएं, फैक्ट्रियां और मोटर-कारें जितना अधिक धुआं वायुमंडल में उगलती हैं, वह हवा में मिल कर उसकी शुद्धता को नष्ट ही करता है।

पिछले दिनों पृथ्वी की वायुमंडल में प्राणवायु तेज़ी से कम होती जा रही है तथा दूसरे तत्व यथा कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन आदि बढ़ रहे हैं। इस स्थिति के लिए बढ़ती यांत्रिक सभ्यता को ही उत्तरदायी ठहराया गया है। इसलिए वृक्ष लगाने और वनस्पतियों का संवर्धन करने की आवश्यकता पर ज़ोर

दिया गया है।

वायुमंडल को शुद्ध बनाने के साथ वृक्ष-वनस्पति वर्षा को प्रभावित करती है। वृक्ष बादलों को आकर्षित करते हैं। जहां सघन वृक्ष होते हैं, वहां वर्षा भी अधिक होती है। इसके अतिरिक्त वृक्षों से प्राप्त होने वाले फल मनुष्य का सर्वोत्तम, सुपाच्य, स्वादिष्ट और पौष्टिक तत्वों से भरपूर प्राकृतिक भोजन है। रोगी-निरोगी, बाल-वृद्ध सभी को इस अमृत उपलब्धि से तृप्ति और पुष्टि मिलती है तथा पुष्प उदास मन को उल्लास से भर देते हैं। इसलिए वृक्षारोपण को समझा और समझाया जाना चाहिए। इसे रचनात्मक, सामाजिक कार्यक्रमों का एक अंग बनाया जाना चाहिए।

अब इस तथ्य को विशेषज्ञ एक मत से स्वीकार करते हैं कि जिस देश में वन जितने सघन होंगे, वहां नदियां भी बहुत कम उफनेंगी और जहां वन-सम्पदा का नाश किया जाएगा, वहां बाढ़ संकट भी दिनों-दिन बढ़ता ही जाएगा। नतीजा यह है कि जितने घट सघनता वाले पहाड़ी इलाके हैं, वहां शहरीकरण के कारण अधिक वर्षा के रूप में पानी की बूंदें ज़मीन पर गिरती हैं, उनमें वेग होता है और वह ज़मीन को काटती हैं, जबकि सघन वृक्ष, वनस्पति पानी के वेग को कम कर देते हैं। पेड़-पौधों द्वारा वर्षा का बहुत सा जल सोख लिया जाता है, जबकि खुले मैदानों में वह पानी बह जाता है। इस संबंध में कहा गया है कि यदि लगातार 15 घंटे तक पानी गिरे और साथ ही 6 इंच वर्षा हो, तो सघन वनों में एक बूंद पानी भी ज़मीन की सतह से नदी-नालों में नहीं बहेगा।

परन्तु सीधे ज़मीन पर गिर कर बहने वाला पानी ज़मीन को काटता हुआ चलता है। इस पानी में मिट्टी के बारीक-बारीक कण मिल जाते हैं, जो नदियों में पहुंच कर उन्हें उथला बना देते हैं। मटमेल पानी में घनत्व चूंकि स्वच्छ पानी से अधिक रहता है। इसलिए वह मिट्टी को खरोचता हुआ नदियों में जाता है। इस प्रकार नदियां प्रति वर्ष उथली होती हैं। उथली होती जा रही नदियों का फाट भी हर वर्ष चौड़ा होता जा रहा है और चौड़े फाट वाली यह नदियां प्राय: अपनी दिशाएं बदलती रहती हैं, जिसके कारण प्रति वर्ष आने वाली बाढ़ एक विस्तृत भू-भाग में, जान-माल का सत्यानाश करके चली जाती है। अभी भी नेपाल / बिहार ब्रह्मपुत्रा आदि में हर साल हमारे देश का नुकसान हो रहा है।

इसके विपरीत वनों में खड़े हुए सघन पेड़ों से छन कर निकलने वाला पानी काफी स्वच्छ रहता है। इस स्वच्छ जल में नदी को और गहरा बनाने की शक्ति रहती है।

यही कारण है कि जहां घने वन हैं, वहां बाढ़ कम आती है। इसलिए अमेरिका में बाढ़ों को रोकने के लिए अन्यान्य व्यवस्थाओं के साथ-साथ वनस्पति संवर्धन पर अधिक ज़ोर दिया जाता है।

अब भारत सरकार तथा राज्य सरकारों को वृक्षों का होना मानवीय जीवन और उसकी संपदा को सुरक्षा के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी किया जाए। प्रत्येक भारतीय वर्षा के कुछ समय से पहले पेड़/पौधे लगाए। इसके लिए सख्त कानूनों को लागू किया जाए। यदि कोई व्यक्ति वृक्ष ना लगा सके, तब इतना तो कर सकता है कि हरे पेड़ों को ना काटा जाए। वृक्ष के सूख जाने पर उसे काटना आवश्यक हो जाता है, परन्तु इसके साथ-साथ हर नागरिक को चाहिए कि सूखे वृक्ष काटने के बाद कम से कम दो वृक्ष लगाए और संभाले। अपने लाभ के लिए हरे-भरे वृक्षों को काटना एक प्रकार की जीव हत्या से कम पाप नहीं है। अगर कोई ऐसा करता है तो अपराधिक मामला बना कर 10 साल तक कैद की सजा दी जाए। अगर

वृक्षों का कटाव शहरीकरण के लिए होता रहा, तो तैयार हो जाएं अपने जान-माल के नुकसान के लिए।

अंत में लिखना चाहता हूं कि वृक्षों को ना काटने के साथ इस दिशा में रचनात्मक कदम भी उठाने चाहिए। जैसे गांवों में, घरों के आस-पास कुछ जगह खाली पड़ी रहती है। उस जगह पर पेड़ लगाए जाएं, तो गांव किसी बगीचे में बसा हुआ सुन्दर शोभायमान प्रतीत होगा। खेतों में यथा स्थापन फल वाले वृक्ष लगाए जा सकते हैं। हर घर आंगन में सब्जियां, तुलसी, नीम, पुदीना, हरा धनिया आदि औषधीय पौधे मौसम अनुसार लगाएं तथा चमेली, गुलाब, गेंदा आदि लगाएं, तो आपका घर, वातावरण बहुत शुद्ध होगा। नीम, पीपल या बोहड़ इत्यादि लगाएं तथा सायं: को चौपाल लगाएं। कितना मजा आयेगा। हां, अंत में यह बहुत आवश्यक है कि पेड़ों तथा सब्ज़ियां/फलदार पौधों को लगाने के बाद खास तौर पर वृक्षारोपण के बाद उनकी खाद-पानी, निराई-गुड़ाई, बाड़ रखवाली और रख-रखाव की व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

आजकल वर्षा का मौसम चल रहा है। इसका लाभ लीजिये तथा जन-जन वृक्षारोपण का महत्व समझाना चाहिए और इस दिशा में प्रेरित व प्रोत्साहित करना चाहिए।

अंत में यह निवेदित करना चाहता हूं कि हमारे देश में जो कोरोना महामारी का प्रकोप चल रहा है, इस बीच रोगियों को अस्पतालों में सिलेंडरों द्वारा बनावटी ऑक्सीजन गैस (जो प्राणवायु / जीवनदानी है) दी जाती है। परन्तु जो हमें ईश्वर की कृपा से पेड़ों, फल / सब्ज़ियों / औषधियों के पौधों, जंगली फल / सब्ज़ियों / जड़ी-बूटियों आदि से कुदरती प्राणवायु (Oxygen) भी मिल रही है, उसका फायदा हम क्यों ना उठाएं तथा वृक्षोरोपण वर्षा के मौसम में दिवस मनाएं तथा हर दिन तीज का त्यौहार झोला-झोले तथा गीत-संगीत / पंजाब का भंगड़ा तथा माल-पुड़े/जलेबी आदि खायें तथा सुन्दर सुगंधित शुद्ध प्राण वायु (ऑक्सीजन) वातावरण पैदा करें, फिर देखें आपके चेहरों पर कुदरती लालिमा / हल्की- हल्की मीठी मुस्कान मिलेगी। कहने का भाव है निरोगी काया तथा स्वस्थ जीवन पायें। अन्य जीवनधारी तथा कुदरत के साथ अटूट संबंध बना कर सदा सुखद मानव जीवन का आनंद लें।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

बासमती जीआई टैग विवाद से भारतीय बासमती चावल की गुणवत्ता और निर्यात कम होने की संभावना

प्रेस सूचना ब्यूरो (पीआईबी) और कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, भारत दुनिया का सबसे बड़ा बासमती चावल निर्यातक है। वर्ष 2024-25 में भारत ने 50,312 करोड़ मूल्य का रिकॉर्ड 60.65 लाख मीट्रिक टन बासमती चावल वैश्विक बाजारों को निर्यात किया। बासमती चावल का निर्यात औसत 9300 रूपये प्रति किवंटल की दर से किया गया। देश के घरेलू बाजार में भी बासमती चावल का औसत बाजार मूल्य 10,000 रूपये प्रति किवंटल से अधिक ही रहता है। वाणिज्य मंत्रालय के अधीन 'एपीडा' (कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण) बासमती चावल के निर्यात और गुणवत्ता को विनियमित करने वाली मुख्य संस्था ने बासमती उत्पादन को बढ़ाने और उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए, देश का पहला कृत्रिम मेधा आधारित बासमती धान सर्वेक्षण प्रोजेक्ट (2026-2028) लॉन्च किया है।

बासमती धान भारत में उत्पन्न, सुगंधित, लंबे और पतले दाने वाला विशेष चावल है। इसकी खेती विशिष्ट जलवायु में हिमालय की तराई क्षेत्र में होती है। इसकी खास सुगंध और स्वाद के कारण इसकी अंतरराष्ट्रीय बाजार में काफी मांग है और निर्यात के लिए महत्वपूर्ण फसल है। वैश्विक स्तर पर कुल बासमती चावल का लगभग 70 प्रतिशत उत्पादन भारत और 30 प्रतिशत पाकिस्तान में होता है। देश में लगभग 12 मिलियन मीट्रिक टन वार्षिक बासमती चावल के उत्पादन में से लगभग 6 मिलियन मीट्रिक टन बासमती चावल का निर्यात होता है।

एपीडा (कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण) ने 'बासमती' शब्द को वैश्विक स्तर पर भौगोलिक संकेत (जीआई) के रूप में पंजीकृत कराया और बासमती चावल की प्रामाणिकता की गुणवत्ता सुनिश्चित करता है। एपीडा की फसल सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2023-24 में भारत में बासमती धान का कुल क्षेत्रफल लगभग 25 लाख हैक्टेयर रहा और उत्पादन 12-15 मिलियन मीट्रिक टन हुआ। जिसमें पंजाब का क्षेत्रफल 8.12 लाख हैक्टेयर, हरियाणा का 7.87 लाख हैक्टेयर तथा उत्तर प्रदेश का 4. 61 लाख हैक्टेयर रहा।

उल्लेखनीय है कि बासमती धान की खेती भारतीय उपमहाद्वीप में हिमालय की तलहटी के विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र हरियाणा, पंजाब, पश्चिम उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों तक ही सीमित है। वैज्ञानिक तौर पर, बासमती धान की खेती भारत सहित दुनियाभर के सभी धान बहुल क्षेत्र में सफलतापूर्वक की जा सकती है। लेकिन विशिष्ट जलवायु और विशेष क्षेत्र में उगाए जाने पर ही बासमती धान की किस्म सुगंधित बन पाती है। भारतीय बासमती चावल के अनूठे गुणों का श्रेय इसकी विशिष्ट सुगंध के लिए उत्तरदायी जीन (बीएडीएच2) रासायनिक यौगिक 2-एसिटाइल -1-पाइरोलाइन (2-एपी) के विशिष्ट कृषि-जलवायु क्षेत्र में उत्पादन के साथ फसल कटाई और प्रसंस्करण तरीकों को दिया जाता है।

लेकिन दूर्भागय से, बिचौलियो और राईस मिलर्स के आर्थिक लालच में बासमती चावल की गुणवत्ता पर गहरा संकट बना हुआ है, क्योंकि उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड आदि राज्यों में ग्रीष्मकालीन धान पर प्रतिबंध नही होने से, बासमती धान की कम अवधि वाली किस्में अगस्त महीने में ही मंडियों में बिक्री के लिए आ जाती है, इस फसल को राईस मिलर्स सामान्य धान के समर्थन मूल्य से भी कम पर खरीदकर बासमती चावल में मिलावट करते है। जबकि बासमती धान में सुगंध के लिए उत्तरदायी जीन (बीएडीएच2) रासायनिक यौगिक 2-एसिटाइल-1-पाइरोलाइन (2-एपी) के सक्रिय होने के लिए दिन-रात का औसत तापमान 25 डिग्री सैल्सियस से कम होना चाहिए है। उस जलवायु मे यह जीन सक्रिय होकर बासमती धान फसल में विकसित हो रहे चावल के दानों में सुगंध की मात्रा कई गुना बढ़ा देता है। यह तापमान उत्तर पश्चिम भारत में आमतौर पर 10 सितंबर के बाद ही सम्भव होता है। जबकि पूसा बासमती-1509 जैसी कम अवधि वाली किस्में अगस्त महीने में ही मंडियों में बिक्री के लिए आ जाती हैं, इसी कारण से देश में बिक रहे ज्यादातर बासमती चावल लगभग सुगंधहीन हैं। इसलिए बासमती चावल की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए, सरकार को कृषि उपज मंडियों में पहली अक्तूबर से पहले बासमती धान की बिक्री पर प्रतिबंध लगाना चाहिए।

आधिकारिक तौर पर 11 सितंबर, 2020 को भारत ने अपने यहां पैदा होने वाली बासमती के लिए विशेष भौगोलिक पहचान (एक्सकलूसिव ज्योग्राफिकल इंडिकेशन) के लिए आवेदन किया था। भारत ने अपने बासमती की अहमियत बनाए रखने के लिए यूरोपियन यूनियन में पाकिस्तान से अलग होकर ज्योग्राफिकल इंडिकेशन (जी.आई.) टैग की मांग की थी। जियोग्राफिकल इंडिकेशन (जी.आई.) में क्षेत्र विशेष में वस्तु अथवा उत्पाद के उत्पादन को कानूनी मान्यता गुणवत्ता व लक्षणों के आधार पर विशिष्ट पहचान मिलती है। जी.आई.आर. होने के बाद दूसरा व्यक्ति या संस्था उस उत्पाद पर रजिस्ट्रेशन के लिए दावा पेश नहीं कर सकता। उत्पाद विशेष के निर्यात व वाणिज्यिक कारोबार के लिए क्षेत्र विशेष का दावा पुख्ता हो जाता है।

क्रमशः

Crop® Chemicals
बेहतर गुणवत्ता
बेहतर फसल
CONTACT: 8288014051 | 9216103075 | 9216103069

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें
खेती संदेश
हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र
कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर
एक वर्ष में 52 अंक
किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए
चंदों में विशेष छूट
एक वर्ष 500/- रुपए
दो वर्ष 800/- रुपए
पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :
90410-14575
KHETI DUNIYAN
TID - 62763351
चंदे भेजने हेतु QR कोड स्कैन करें।
खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला